थार क्षेत्र की कलात्मक अभिव्यक्ति का वर्तमान और भविष्य

*डॉ. किशनी फुलवानी

राजस्थान विशेषतः

थार रेगिस्तान आधुनिक सभ्यता और शिक्षा से अभी तक प्रायः अछूता है। यही कारण है कि यहाँ का लोक साहित्य अपने मौलिक रूप में जीवित है। यहाँ का भोला जनमानस अपनी लोक साहित्यिक सम्पदा से जन्म से मरण तक जुड़ा हुआ है। हमने जब इनको गाते और बजाते सुना तो इन लोकगायकों में ऐसा उल्लास पाया, मानों इनको दुनियाँ की तमाम दौलत मिल गई हो। इनकी गायन शैली की मुख्य विशेषता यही है। सिर्फ वे ही नहीं, सुनने वाले भी अपनी सुध–बुध खोकर एक अलग दुनियाँ में पहुँच जाते हैं। मरुभूमि के सौरभ की जो ताजगी आज भी इस लोकसाहित्य में है, वह न बड़े–बड़े प्रबन्ध काव्यों के अलग–अलग छंदों में है, और न इतिहास तथा ख्यालों की जिल्दों में ही ढूंढने से मिल सकती है। यहाँ का लोकसाहित्य जन जीवन से सिंचित उस कुसुम के समान है, जिसका रंग समय के आतप से आज तक भी नहीं मुरझाने पाया है और न इसके सौरभ में कोई कमी आई है। यह लोकसाहित्य मरुभूमि के निवासियों की रागात्मक प्रवृत्तियों का वह कोष है, जो लिपिबद्ध न होने पर भी सांस्कृतिक इतिहास की वास्तविकता को बड़ी खूबी के साथ अपने में संजोए हुए हैं।

हमारा लोक शास्त्रीय ज्ञान जितना छप चुका है, कम से कम उतना ही मौखिक रूप में मौजूद है। सिन्धी के विद्वान डॉ. महमूद इब्राहीम जोयो ने सिन्धी की 'जोत' साहित्यिक पत्रिका में अपने लेख–सिन्धी–लोकअदब में लिखा है कि– "यूरोप की लेटो या लैटविया रियासत की जनसंख्या आज भी कुल बीस लाख मुश्किल से है, इसी देश के विद्वानों ने अपनी लैटवियाई भाषा में आजादी के बाद करीब पचास साल के बहुत कम समय में अपने लोक साहित्य के 2 लाख अस्सी हजार लोकगीत और 65 हजार लोक किस्से और कहानियाँ इकट्ठी करली हैं। महज इसी एक उदाहरण से हम अंदाज लगा सकते हैं कि हमारे प्राचीन देश और प्राचीन बोलियों में अशिक्षित लोक के पास लोकसाहित्य के कितने न बेमिसाल और बेशुमार खजाने मौजूद होंगे।

पश्चिमी राजस्थान में राजस्थानी और सिन्धी भाषा की एक समृद्ध परंपरा प्रचलित है। राजस्थानी भाषा की इस समृद्धशाली और वैभवशाली धरोहर को फलने–फूलने में राजस्थानी के विद्वान, सरकारी और अर्द्ध–सरकारी संस्थान अपना पूरा सहयोग और प्रोत्साहन देते हैं। इस क्षेत्र के लोकगायकों बच्चों– जवानों और बूढ़ों के लिए अन्य सुविधाओं के साथ छात्रवृति की राशियाँ तक तय कर दी गई हैं। कहना न होगा कि राजस्थानी कलाप्रेमियों के कारण ही इस वैभवशाली परंपरा ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है जबकि सिन्धी भाषा की जो कि कभी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त समृद्धिशाली और वैभवशाली गेय परंपरा थी, उसे आज वह स्थान प्राप्त नहीं है। इन लोकगायकों से बात करने पर ज्ञात हुआ कि इस वैभवशाली गेय परंपरा का कोई कद्रदान नहीं रहा है। हमने स्वयं ने देखा, सिन्धी भाषी लोकगायक सिन्धी में अनेक कलाम, काफ़ी और बैतों की प्रारंभ की पंक्ति सुनाकर खामोश हो जाते थे, बहुत कोशिश के बाद भी उनकी स्मृति पटल पर वे पूरी तरह नहीं उतरती। विवश होकर वे कह उठते – "हम क्या करें, सैकड़ों सिन्धी कलाम और गीत जो हमें आते थे, न गाने के कारण हम भूल गये हैं।" मैं इस

वैभवशाली गेय परंपरा की उपेक्षा को मूक देखती रही। इस उपेक्षा का सबसे बड़ा कारण पाकिस्तान बन जाने के कारण सिन्धी भाषा का वास्तविक संस्कृति समृद्ध भाग आज लगभग पूरा का पूरा पाकिस्तान की सीमा में चला गया है और वह भूभाग आज दूसरा देश या प्रदेश है जहाँ हम सिन्धी लोगों का आवागमन राजनैतिक बाधाओ के कारण सुलभ नहीं रहा है। आज सिन्धी भाषा का अपना कोई प्रांत नहीं है और न ही राजस्थान में सिन्धी संगीत नाटक अकादमी की ही कोई शाखा पृथक रूप से खुल पाई है।

हाँ, पश्चिमी राजस्थान में, राज्य सरकार द्वारा राजस्थान संगीत नाटक अकादमी स्थापित है, जो लोक नाट्य विद्या के उत्थान व सर्वेक्षण, कठपुतली कला को पुनः प्रतिष्ठापित करने, युवा कलाकार प्रोत्साहन, प्रकाशन की योजना लागू करने के साथ संगीत शिक्षा के राष्ट्रीय सेमीनार और रंगमंच के विकास व संरक्षण के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन करती है। अकादमी का अपना एक रिकार्डिंग रूम, डार्क रूम है। अकादमी के सर्वेक्षण युनिट द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के दौरे किये जाते हैं व उस क्षेत्र की कलाओं की खोज के साथ उनका रिकार्डिंग फोटोग्राफी व डोक्यूमेंटेशन (ध्वनि आंलकन की सहायता से पुनर्लेखन) भी किया जाता है। अकादमी, संग्रहालय के ध्वनि लिपिबद्ध राजस्थानी प्रेमाख्यानों के प्रकाशन का कार्य भी करती है जो अकादमी की 'रंगयोग' त्रैमासिक में प्रकाशित होती हैं।

थार रेगिस्तान में सिन्धी भाषा और संस्कृति अपने जीवन्त रूप में कायम है। इस क्षेत्र के लोक गायक सिन्धी और राजस्थानी दोनों भाषाओं में गाते गायक बड़ी चतुराई से उस भाषा में हेर–फेर कर राजस्थानी में भी गा लेते हैं। उदाहरण के लिए जसमाओडण और मूमल–राणा लोककथाएँ हैं लेकिन ध्वनि बद्ध और लिपिबद्ध इन राजस्थानी प्रेमाख्यानों का जब प्रकाशन किया जाता है तो उनमें भाषा सम्बन्धी कई त्रुटियाँ रह जाती हैं क्योंकि लिपिबद्ध करने वाले राजस्थानी भाषा–भाषी व्यक्ति को सिन्धी भाषा की कोई जानकारी नहीं होती है। अकादमी में सिन्धी भाषी अधिकारी, कर्मचारी का होना बहुत जरूरी है जो पश्चिमी राजस्थान सुदुर अंचलों में इस भाषा के अनमोल खजाने के संरक्षण और संवर्द्धन के कार्य को किया जा सके। हमें आशा का दामन नहीं छोड़ना चाहिये। यह ग्रंथ भी इसी प्रवृति का घोतक है। कला प्रेमियों के लिए भाषा जैसी कोई दीवार या सीमा कभी नहीं रह सकती। अन्त में हम कह सकते हैं कि पश्चिमी राजस्थान की ही नहीं, बल्कि किसी प्रांत विशेष की कलात्मक अभिव्यक्ति सदा सर्वथा ही विद्वानों और विद्यार्थियों की मोहताज नहीं रहेगी बल्कि समय की कितनी ही मंज़िलें तय करती हुई आगे बढ़ती ही जाएगी। पर एक बड़ी कठिनाई यह है कि इन प्रेमाख्यानों का वास्तविक आनन्द गाने और सुनने में ही है तथा यह तभी संभव हो सकेगा जब राज्य सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार के द्वारा इस ओर कोई सार्थक कदम न उठाए जाएं एवम् सिन्धी भाषी संस्कृति के लोक–गीतात्मक पक्ष के समुचित संरक्षण के हेतु कोई विशेष लोक कला संस्थान की स्थापना न हो जाए।

***पूर्व सह–आचार्य**
राजकीय महाविद्यालय
अजमेर (राज.)